कृषि जल प्रबन्धन और वर्षा जल प्रबंधन एवं संग्रहण

सुषमा सागर, रेशू चौधरी एवं आर. एस. सेंगर

सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय मेरठ।

सारांश

भारतवर्ष के अधिकतर हिस्सों में वार्षिक वर्षाजल का लगभग 70–80 प्रतिशत भाग मानूसन के तीन महीनों में प्राप्त होता है तथा बाकी के नौ महीनों में सिर्फ लगभग 20–30 प्रतिशत ही वर्षा होती है। इस विषम जल वितरण के कारण जहॉ मानसून में वर्षाजल का अधिकांश भाग अपवाह के रूप में नदी–नालों में बहकर बेकार चला जाता है और मृदा अपरदन एवं बाढ़ जैसी समस्याओं को जन्म देता है, वहीं बाकी के नौ महीनों में ज्यादातर कृषि योग्य भूमि असिंचित रह जाती है। जहॉ सिंचाई के मुख्य साधन भूजल है वहॉ भूजल के अनियंत्रित दोहन से भूजल स्तर दिन–प्रतिदिन गिरता जा रहा है। यह समस्या देश के उत्तरी प्रदेशों में ज्यादा भयावह रूप धारण कर चुकी हैं, जहॉ भूजल स्तर का गिराव 1 मीटर से 4 मीटर प्रतिवर्ष है। फसल उत्पादन में देश के उत्तरी प्रदेशों मुख्यतः पंजाब एवं हरियाणा का विषेश योगदान रहता है तथा इन्ही प्रदेशों का भूजल स्तर का गिराव सबसे ज्यादा रहा है, इसके अलावा उत्तर प्रदेश में भी भूजल स्तर निरन्तर गिरता जा रहा है जो एक चिन्ता का विषय है। इसके लिए जरूरी है कि कृषि जल–प्रबंधन तथा वर्षा जल प्रबंधन एवं संग्रहण की आधुनिक तकनीकों को अपनाकर जल संग्रहण के लिए किसानों को जागरूक किया जाये। तभी हमें लगातार बढ़ रही इस चुनौती से निपट सकते हैं।

वर्षा ऋतु में अनियंत्रित अपवाह अपने साथ–साथ उपजाऊ मिट्टी एवं पोषक तत्वों को भी बहाकर ले जाता है। पोषक तत्वों का लगातार क्षरण भूमि में सूक्ष्म एवं अतिसूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी अथवा असंतुलन पैदा कर देते है और परिणामस्वरूप सफल फसल उत्पादन के लिए पोषक तत्वों को अतिरिक्त मात्रा में डालना पड़ता है। इस प्रकार फसलोत्पादन पर प्रति इकाई खर्च बढ़ जाता है तथा किसान का लाभांश कम हो जाता है। अगर समय पर वर्षाजल प्रबंधन की तकनीकों का प्रयोग करके भूमि अपरदन का उपाय न किया जाए तो कुछ ही वर्षों में हरी–भरी जमीन बंजर एवं अनुपजाऊ जमीन में परिवर्तित हो जाती है। अनियंत्रित वर्षाजल अपवाह सिर्फ पहाड़ी क्षेत्रों में ही समस्या का कारण नही है बल्कि यही अपरदित मृदा से परिपूर्ण अपवाह मैदानी इलाकों की नदियों में इक्कठा कर उन्हे उथला बना देता है, जिससे नदियों में बाढ़ की समस्या को ओर अधिक बढ़ावा मिलता है। उपरोक्त वर्णित समस्याओं की वजह से भूमि एवं शुद्ध जल की प्रतिव्यक्ति उपलब्धता दिन–प्रतिदिन घटती जा रही है जिसे सिर्फ समकेतिक एवं प्रभावी वर्षाजल संरक्षण, प्रबंधन एवं संग्रहण द्वारा दूर किया जा सकता है।

Abstract

In the large area of the India, 70-80 per cent of rain water is obtained in just three month of monsoon and rest of the nine month there is only 20-30 per cent of total rain. In this adverse condition of monsoon the most of the part of the rainy water drained off which is totally wasted and also rises the problem of soil erosion and flood. Rest of the nine month agriculture land remains unirrigated or drought, due to unavailable of irrigated water. Because of the uncontrolled drawing of grounded water for the agriculture purpose, the ground water level has come down. This problem in northern India has taken a devastating form where the ground water level has been down up to one to four meter. The Haryana and Punjab are main states in agriculture production in India, the ground water level is too down. Beside it's the water level of Uttar Pradesh is coming down continuously which is a major issue. For this purpose it is necessary that agriculture water management, rain water management and its conservation by adopting the new and innovative techniques should be apply, then we will be able to fight this continuously rising problem.

In rainy season the excess water of rain drained off the agriculture land and its nutrients too, the continuous depletion of the nutrients in the soil give rise to unbalance and low amount of macro and micronutrients which results in excessive dose application of chemicals and fertilizers for good crop production. Because of this the cost of the cultivation gets rises which ultimately caused the loss in profit. If the soil erosion is not stopped by adopting the techniques of rain water management. The cultivated agriculture field will be turned into the infertile and useless in few years. The uncontrolled rain water flow is not the problem only in hill areas while this excess water of rain containing soil of cultivated land goes into the rivers and makes them overflow which become problematic in the form of flood. The per capita availability of water is getting depleted day by day because of the above said problem which can be only manage by integrated and dominant rain water conservation, management and preservation.

प्रस्तावना

पानी को सर्वसुलभमान इसकी कितनी अवहेलना की जा रही है, इसका अहसास इस बात से हो रहा है कि विश्व जल आयोग के अध्यक्ष को इस सदी में जल हेतु युद्ध की आशंका तक दिखाई देने लगी है। भारतीय संस्कृति 'जल प्रिय' संस्कृति रही है। हमारे पूर्वजों ने धरती के प्रत्येक संसाधन के प्रति एक आध्यात्मिक रिश्ता कायम कर उसकी महत्ता को हम तक पहुँचानें का मार्ग प्रशस्त किया है। आज हम इन परम्परओं को भूलते जा रहे हैं फलतः हर संसाधन की किल्लत का रोना रोते हैं। धरती पर जल आज भी उतनी ही मात्रा में उपस्थित है जितना कि प्रारम्भ में था। आज हमारी अविवेकपूर्ण व्यवस्था से युद्ध की आशंका पैदा हो रही हैं।

पूर्वजों की सनातन परम्परा में जल कमी न रहने देने की एक परम्परा है–तालाब परम्परा। तालाब वर्षा जल को सहेजने की पुरातन परम्परा है जिसे हम नल संस्कृति के कारण भूल गए। राजस्थान जैसे कम वर्षा वाले क्षेत्र में तालाब पुराने समय में प्रमुख जलस्रोत रहे हैं। इस राज्य के चुरू जिले की सुजानगढ़ तहसील के एक गांव ने तालाब संस्कृति अपनाकर न केवल जल समस्या से निजात पाई है बल्कि वर्षा की आवक भी बढ़ाई है। (जेठू, 2004)

धरती पर गिरने वाले वर्षा जल की प्रत्येक बूंद को रोका जा सकता है। बशर्ते इसके बलए संरचनाओं की ऐसी श्रृंखला तैयार की जाए कि पानी की एक भी बूंद 10 मीटर की दूरी से अधिक न बहने पाए। इसे कोई जल संरचना रोक ले और धरती में अवशोषित कर दे यही संपूर्ण जल–प्रबन्धन है। जलग्रहण का सिद्धांत है कि 'पानी दौड़े नही, चले', जबकि संपूर्ण जल प्रबंधन का सिद्धांत है कि 'पानी न दौड़े न चले बल्कि रेंगे और अन्ततः रूक जाए, और जमीन की गहराईयों में ऐसा समा जाए कि उसे सूरज की रोशनी भी न उड़ा सके।' वह जमीन के अन्दर धीरे–धीरे चलता हुआ वहां निकले जहां कि हम उसे चाहते हैं (कुओं में, तालाबों में, हैंडपंपों में, ट्यूबवैल में, नदी–नालों में)। इस प्रकार से प्राप्त जल स्वच्छ एवं सुरक्षित होता है और लम्बे समय तक मिलता/बहता रहता है।

इन संरचनाओं में 5 से 10 से.मी. वर्षा जल एक बार में रोका जा सकता है। इससे अधिक वर्षा यदा–कदा ही दो–तीन वर्षों में एक बार होती है, और इतनी साल में तीन–चार बार। इस प्रकार सम्पूर्ण वर्षा में 100 से.मी. तक की योग वर्षा को भूमि में अवशोषित किया जा सकता है। यह जल भूमि में अवशोषित होकर धीमी गति से कुओं, ट्यूबवेल, हैंडपम्प व तालाबों में आगामी 6 माह से 12 माह तक प्राप्त होता रहता है। इससे हमारी खरीफ की फसल सुनिश्चित होती है, सूखे से मुक्ति मिलती है, रबी की फसल भी पर्याप्त होती है तथा गर्मी में पेयजल संकट नही होता है।

जिले में इस सिद्वांत पर 200 से अधिक ग्रामों एवं 30 हजार हैक्टेयर भूमि पर कार्य किया जा रहा है। इसका लाभ 50 हजार हैक्टेयर क्षेत्रफल में सूखे से मुक्ति के रूप में व 25 हजार हैक्टेयर अतिरिक्त रबी की फसलों के रूप में प्राप्त होगा।

जलग्रहण

परिवर्तन प्रकृति का नियम है। मानव द्वारा किया गया परिवर्तन छेड़खानी है, बदलाव है, प्रकृति के नियम के विरूद्व है, भटकाव है। जब से मानव ने इसकी दिशा, रफ्तार में अधिक रूचि दिखाई है तब से समस्या जटिल हो गई है। जब से धरती ठंड़ी हुई है तभी से होने वाली भौगोलिक उथल–पुथल शुरू हुई। नदी–नाले, समुद्र, पहाड़ बने और फिर पैदा हुआ जीवन, वन, मिट्टी, लाखों करोड़ों वर्षों से यह प्रक्रिया भली–भॅति चल रही है। धीरे–धीरे इसमें एक संतुलन स्थापित हो गया है। जब से मानव उत्पाती हुए तब से परिवर्तन दिशाहीन हो गया। सैंकड़ों साल पहले आज जहॉ रेगिस्तान, दलदल बंजर

जमीन दिखती है, वहां ऐसा नही था। गत 100 वर्षों में जनसंख्या अनियंत्रित रूप से बढ़ी है, और उससे अधिक रफ्तार से बढ़ा है हमारा लालच। शनै–शनै हम जंगल काटते चले गए। प्रकृति की जो क्रिया–प्रतिक्रिया थी उसका संतुलन बिगड़ा है। वैसे भी कोई क्रिया होती है वहीं उसकी प्रतिक्रिया भी होती है। यह प्रतिक्रिया कितनी व्यापक और भयानक हो सकती है इसका अंदाजा हमें अपनी करनी के समय नही था। आज इसका अहसास हो रहा है।

नेशनल वाटरशेड कमीशन ने तो 21वीं सदी में पानी को लेकर दंगों की आशंका व्यक्त की है। पानी की ओर उपलब्धता इस साल हमें अच्छी तरह समझ में आ गई है। मानसून से पहले इस देश में एक घूंट पीने के पानी की समस्या हो जाती है। जब सभी तरफ अच्छे वन हुआ करते थे तब 9 प्रतिशत जल नही बहता था वहीं जमीन में समा जाता था। सामान्य वनों में 20 प्रतिशत तथा अच्छे वनों में 90 प्रतिशत पानी बारिश में जमीन में समा जाता है। अब हम वहां खेती करते हैं। खेती भी 20–50 प्रतिशत तक पानी सोख लेती है, एवं जहां खेती नही होती वहां न पानी रूकता है, न मिट्टी। इसी कारण से टनों मिट्टी सलाना बह जाती है जबकि एक से.मी. मिट्टी बननें में हजार वर्ष लगते हैं। यह बात ओर है कि अधिकांश हिस्सों में या तो मिट्टी बनना बंद हो गई है या उसकी रफ्तार धीमी हो गई है। यही कारण है कि आज पेड़–पौधे व चारे, वनोपज की उपलब्धता कम हो गई है। शेष वनों पर भी दबाव बढ़ रहा है। इस स्थिति में मिट्टी बही तो वह तालाब और नालों को पाटने लगी है। नदियों–नालों की चौड़ाई बढ़ी है। बाढ़ों की भयानकता भी इसी से बढ़ी है। इससे मौसम भी बदल गया है। पहले की तुलना में मानसून का असंतुलन बढ़ने लगा है। बस इसी समय से कृषि वैज्ञानिकों की चिन्ताएं बढ़ी कि किस तरह से बारिश का पानी जमीन के अन्दर पहुँचाया जाए। वन लगाना कठिन काम है। पहले जून माह में प्राथमिक रूप से पेड़–पौधे लग जाया करते हैं, अब वृक्षारोपण के लिए गडढ़े खोदकर पहले अच्छी मिट्टी भरनी पड़ती है। चारागाह में वृद्धि करें, कृषि उत्पादकता बढ़ाएं एवं पानी को जमीन में पहुँचाएं, यह लक्ष्य वैज्ञानिकों ने निर्धारित किया है। इसके अतिरिक्त भूमि की मांग कम होगी। लोगों की हालत सुधरेगी विकास की धाराओं पर असर पड़ेगा।

कोयले को जलाकर ऊर्जा निकाली, उसकी भाप से टरबाइनें घूमीं और फिर बिजली बनी। इसी गर्मी से भाप बनता है। इस ऊर्जा ने 7 बार अपना स्वरूप बदला। परिवर्तन में 80 से 90 प्रतिशत इसमें ऊर्जा रह जाती है और अन्ततः 40 से 50 प्रतिशत पानी भी बार–बार की बर्बादियों को रोकना ही जलगहण सिद्वांत है। यदि वर्षा का पानी गिरने पर हम उसे रोक दें, जमीन के अंदर या जमीन के ऊपर तो पानी के उपयोग में आने वाली अनेक अवस्थाओं व नुकसानों से हम निश्चित ही बच सकेगें।

यदि हम ऊंचे क्षेत्रों में गिरने वाले पानी को रोक दे तो ऊंचे क्षेत्र (पहाड़ आदि को) जो स्पंज के समान होते हैं, पानी को सोख लेते हैं। पहाड़ियों में बहुत विशाल मात्रा में पानी को रोका जा सकता है। पहाड़ों के नीचे की ओर मैदानी क्षेत्र जहां गांव बसे हैं, इनमें पानी सालभर रिस–रिस कर आता है। नीचे से फिर पहाड़ों को देखने पर ऐसा लगता है जैसे ओवर टैंक हो, जिसकी भंड़ार क्षमता बहुत अधिक है, बल्कि पानी भी रिस–रिसकर दूर–दूर तक जाता है। पानी की जितनी हमें आवश्यकता है, उसी रफ्तार से पानी रिसेगा। इसका विशेष महत्व तब है जब अल्प वर्षा की स्थिति निर्मित होती है तब यही भूमिजल हमें मिलता रहेगा और हमें पानी की समस्या नही होगी। वैसे भी जमीन और पहाड़ों को फिर से पूर्ण रूप से तृप्त करने के लिए अनेक वर्ष लगते हैं।

जलग्रहण की सबसे उपयोगिता तब है, जब इसे बहुत ही सूक्ष्मता, धैर्य और विवेक के साथ इसे लागू किया जाए तो नतीजा यह निकलना चाहिए कि बरसात में नदी–नाले या तो बहे ही नही या फिर बहुत ही धीमें बहें। (सालभर यानी कि भीषण गर्मी में) जल की उपलब्धता बनी रहे। पानी के अलावा जलग्रहण में वहां के व्यक्तियों को संगठित करना एक महत्वपूर्ण कार्य है। एक अच्छे जलग्रहण में सीमेन्ट और लोहे का कोई काम नही है, सिर्फ श्रम ही पर्याप्त है। अर्थात "हींग लगे न फिटकरी रंग दिखे चोखा"। सामाजिक एवं आर्थिक रूप से एक अच्छे जलग्रहण का मापदण्ड है, संगठित एवं सहयोगी समाज का उद्भव और औसत आय में कम से कम 100 प्रतिशत वृद्धि। यह आदर्श जलग्रहण कार्य की पराकाष्ठा है, यही उसकी परिणति है। (गुप्ता, 2003)

आजकल हम सब स्वच्छ हवा के बारे में सोचते हैं कि यह तो प्रकृति की देन है, इसे भी क्या खरीदकर सांस लेनी होगी? प्राकृतिक संसाधन के तौर पर पानी तब प्रचुरता से उपलब्ध था। अतः इसके लिए पैसे अदा करने का सवाल ही नहीं था। अगर स्वच्छ पानी को आप तक पहुँचाने में कुछ खर्च करना भी था तो यह जिम्मेदारी शासक की थी। परन्तु आज हम पानी के लिए पैसा वसूलने की बात कर रहे हैं और समझदारी भरा दृष्टिकोण यही है कि हमें इसके बारे में बातें बन्द कर इस पर अमल शुरू कर देना चाहिए।

यदि हम विश्व में चारों ओर नजर डालें कि वे देश जो पानी के लिए पैसा वसूलते हैं वहां पीने के पानी की क्या स्थिति है, और जो नही वसूलते वहां क्या स्थिति है, तो हम पायेगें कि हमारा देश भारत भी गलत समूह में है। यहां शहरी क्षेत्रों में रहने वाले थोड़े–बहुत लोगों को ही सौभाग्यशाली कहा जा सकता है जिन्हे 4 घण्टे तक पीने का पानी प्रतिदिन प्राप्त होता है। ओरों के लिए अनेक विकल्प हैं। या तो बून्द–बून्द पानी के लिए रातभर लम्बी–लम्बी लाइनों में लगकर इन्तजार करें; अपने नलों से मटमैला पानी प्राप्त करें और उसे सुरक्षित बनाने के लिए तमाम प्रकार के तरीके और उपकरणों को आजमाए; या फिर अपने पड़ोस में बिछी पाइप लाइन में सेक्शन पम्प लगाकर पानी की चोरी करें इत्यादि। स्पष्ट है कि आसान तरीका यही होगा कि पानी के चन्द व्यापारियों से कीमत चुकाकर पानी ले लिया जाए। यह स्थिति केवल शहरी क्षेत्रों तक ही सीमित नही है। चाहे हम माने या न मानें, देश में कुछ गांव ऐसे भी हैं जहॉ पानी के व्यापार में निजी उद्यमी जुटे हुए हैं। (पाण्डुरंगी, 2007)

जल अधिकार का निर्धारण

इसे विडम्बना ही समझे–पृथ्वी का दो–तिहाई हिस्सा पानी है और एक प्रतिशत से भी कम भाग तेल। लेकिन तेल हर जगह प्रचुर मात्रा में, जितना हम चाहें उपलब्ध है। दोनों में क्या अन्तर है? पानी निःशुल्क है, इसे मुक्त रूप से हासिल किया जा सकता है, जबकि तेल निःशुल्क नही है, इस पर मालिकाना हक होता है तथा इसका प्रबन्धन किया जाता है।

पर्यावरण सम्बन्धी समस्याओं के मूल में है सार्वजनिकता जिसके अन्तर्गत संसाधन सार्वजनिक स्वामित्व में होते हैं तथा सबको निःशुल्क उपलब्ध होते हैं। गैरेट हार्डिन ने "सार्वजनिक त्रासदी' का मुहावरा इस्तेमाल किया था। हार्डिन ने तर्क के साथ यह बताया था कि पर्यावरण क्षय की वजह संसाधनों का सार्वजनिक होना है। क्योंकि इसमें उनका कोई निश्चित स्वामी नही होता वे निःशुल्क सुलभ होते हैं। चूँकि संसाधन सबके होते हैं, इसलिए वस्तुतः किसी के नही होते। उनका इस्तेमाल सभी करते हैं लेकिन उनका संरक्षण कोई नही करता–इस तथ्य की पूरी जानकारी के बावजूद कि उनके अतिश्य उपभोग से भविष्य के लिए कुछ नही बचेगा। इसकी वजह यह होती है कि एक व्यक्ति यदि उनका बुद्विमत्तापुर्ण इस्तेमाल करे तो भी इस बात की कोई गारन्टी नही होती कि अन्य व्यक्ति भी वैसा ही आचरण करेगें अथवा आगे चलकर उस अच्छे आचरण का कोई प्रतिफल मिलेगा। समस्या के मूल में यही प्रोत्साहन का अभाव है। इसका सरल समाधान यह है कि संसाधन के सार्वजनिक स्वामित्व से हटाकर समुदाय अथवा निजी स्वामित्व के अंतर्गत लाया जाए।

शताब्दियों के काल प्रवाह में भूमि का स्वामित्व सार्वजनिक से सामुदायिक और फिर निजी हाथों में आ गया हैपानी, वन और मत्स्यपालन की देख–रेख पारम्परिक रूप से प्रयोक्ता समुदायों द्वारा की जाती थी। इन्हें बाद में राष्ट्रीयकरण कर सार्वजनिक स्वामित्व के अंतर्गत लाया गया। सार्वजनिक की त्रासदी से बचने के लिए उन्हे वापस समुदाय के नियन्त्रण में लाया जाना चाहिए।

भूमि की सतह पर मौजूद पानी के मामले में तो यह बदलाव केवल वर्तमान में सरकार द्वारा प्रयुक्त परियोजना आवण्टन प्रणाली को ओर मजबूत बनाकर हासिल किया जा सकता है। आमतौर पर परियोजना अधिकारी नगरपालिका तथा अन्य सरकारी प्राधिकरणों के साथ विभिन्न उद्देश्यों के लिए पानी की निश्चित् मात्रा की आपूर्ति के लिए दीर्घावधि के लिए करार करते हैं। इस मात्रात्मक आवण्टन को कानूनी रूप से पर्वतनीय व्यापार योग्य जल अधिकार के आनुपातिक आवण्टन में बदला जा सकता है। इसके तहत पानी का स्वमित्व सरकार के अधीन बना रहेगा लेकिन पानी के उपयोग का वैद्यानिक अधिकार विभिन्न प्रयोक्ताओं के पास होगा। इस दृष्टिकोण से नए दावेदार पैदा नही होगें, बल्कि मौजूदा दावों को मजबूती मिलेगी जिससे दीर्घावधि जल उपयोग योजना तैयार की जा सकेगी।

आपूर्ति एवं मूल्य निर्धारण

जल अधिकार आवण्टित किए जाने और वैद्यानिक रूप से प्रवर्तनीय बनाए जाने के बाद जल प्रयोक्ता संघों को सहकारी तरीके से अथवा प्रसंविदा करके आपूर्ति प्रणाली के प्रचालन और प्रबन्धन का दायित्व सौंपा जा सकता है। पानी के तीन बुनियादी प्रयोक्ता होत हैं–घरेलू (ग्रामीण एवं शहरी), औद्योगिक तथा कृषिगत। निम्नलिखित उपाय सम्बद्ध प्रयोक्ताओं को जल आपूर्ति का वैकल्पिक उपाय बना सकते हैं:

औद्योगिक उपयोग

औद्योगिक इकाईयॉ आमतौर पर किसी औद्योगिक सम्पदा अथवा परिसर में अवस्थित होती हैं। जलापूर्ति तथा मूल्य निर्धारण के लिए परिसर अपनी निजी आधारभूत सुविधा का निर्माण और रख–रखाव करने का निर्णय कर सकता है अथवा किसी निजी कंपनी के साथ इसके लिए समझौता कर सकता है। औद्योगिक उपयोग के लिए निजी आपूर्ति तथा मूल्य निर्धारण को लेकर किसी के भीतर विवाद नही है। फिर ऐसा ही मॉडल अन्य प्रयोक्तओं के लिए क्यों लागू नही किया जा सकता?

कृषि उपयोग

भागीदारी सिंचाई प्रबन्धन को सिंचाई के पानी के प्रबन्धन तथा मूल्य निर्धारण का राष्ट्रीय प्रारूप बनाया जाना चाहिए। इसकी प्रविधि आन्ध्र प्रदेश ने सुझाई है जिसमें किसान जल प्रयोगकर्ता संघों का गठन करते हैं तथा नहर नेटवर्क के रख–रखाव और आपूर्ति जल के लिए शुल्क संग्रहण का कार्य अपने हाथों में ले लेते हैं।

ग्रामीण घरेलू उपयोग

टलवर जिले के गांवों की पानी समितियॉ अथवा पानी पंचायत (जल प्रबन्धन ग्रामसभा, ये पंचायती राज ग्रामसभा से भिन्न हैं) तथा अखरी नदी के जल–भराव क्षेत्र के गॉवों के प्रतिनिधियों के सदस्यों से गठित अन्तरग्राम संगठन, 'अखरी संसद' गॉवों और गॉववासियों के बीच सिंचाई तथा घरेलू उपभेग के लिए जल के इस्तेमाल के लिए एक नियमावली तैयार की है जो सामाजिक तथा पारम्परिक नियमों से अनुशासित है और इसमें विवादों के निपटारे तथा नियमों का उल्लंघन करने वालों के लिए दण्ड के प्रावधान भी निर्दिष्ट किए गए हैं।

कस्बाई घरेलू उपयोग

केरल के अनेक छोटे–छोटे शहरों में जलापूर्ति तथा मूल्य निर्धारण जल प्रयोक्ता सहकारिताओं द्वारा किया कोझीकोड जिले में स्थित ओलवन्ना में 25 से ऊपर शहरी संघ हैं जो पाइप के जरिए घरों में पानी की आपूर्ति का प्रबन्धन कर रहे हैं। पंचायत सफलतापूर्वक सुविधाप्रदाता की नई भूमिका का वरण कर चुकी है और इस अग्रगामी परियोजना को वहनीय बनाने तथा प्रोत्साहित करने के लिए नियामक कार्य का निष्पादन कर रही है। पंचायत इन समितियों को पूँजीगत लागत अथवा प्रचालन एवं रख–रखाव के लिए कोई कोष नही देती। पेयजल कार्यक्रम के समय पूँजीगत तथा रख–रखाव लागत की भरपाई प्रयोक्ता समुदाय ही करते हैं। घरेलू जलापूर्ति के लिए इस तरह की ग्रामीणी सहकारिताएँ सर्वाधिक प्रभावी होती हैं। क्योंकि मुनाफे के लिए काम करने वाली कम्पनियों से इस क्षेत्र में कदम रखने की अपेक्षा नही की जा सकती।

शहरी घरेलू उपयोग

शहरी क्षेत्रों की बुनियादी समस्या निजीकरण नही, बल्कि प्रतिस्पर्धा है। जल आपूर्ति का दायित्व एक अथवा दो निजी कम्पनियों के हाथों में सौंप देने के विचार में कोई वास्तविक सारतत्व नही है। सरकार के एकाधिकार को एक अथवा दो कम्पनियों के एकाधिकार में बदल देने को सुधार नही माना जा सकता। एक तरह के गैर प्रतिस्पर्धी निजीकरण से हर हाल में बचना चाहिए।

इसका विकल्प यह हो सकता है कि शहर के हरेक वार्ड को जलापूर्ति के लिए किसी सरकारी अथवा निजी कम्पनी के साथ करार करने का अधिकार सौंपा जाना चाहिए। यदि किसी वार्ड को लगता है कि कम्पनी अपना करार पूरा नही कर रही तो उसका विकल्प पाना आसान होगा तथा कार्य पड़ोस के वार्ड की कम्पनी को सौंपा जा सकेगा।

वार्ड द्वारा जलापूर्ति के लिए समझौते में स्वीकृत दर का भुगतान कर पाने में जो लोग समर्थ नही हों, उनकी दो तरीकों से मदद की जा सकती है। पहला, प्रत्येक परिवार को निःशुल्क जलापूर्ति की मात्रा का निर्धारण कर उतनी जल की मात्रा का भुगतान सामान्य कर राजस्व से किया जाए। निःशुल्क कोटे से अधिक पानी का इस्तेमाल करने पर उक्त मात्रा का

भुगतान प्रत्येक परिवार करेगा। दूसरे, केवल निर्धनों को ही सब्सिड़ी दी जाए। इसके लिए वार्ड निर्धन परिवारों की पहचान कर उनके पानी के बिल पूर्णतया अथवा एक निर्धारित सीमा तक भुगतान करें।

उपयोग अधिकार/ परियोजना आवण्टन	सिंचाई	औद्योगिक	ग्रामीण घरेलू	शहरी घरेलू
	किसान	औद्योगिक समूह	ग्रामीण	नगरीय निकाय
आपूर्ति	भागीदारी सिंचाई प्रबन्धन जिसमें किसान जल समूहों का गठन कर दर तय करें और रख–रखाव करें	औद्योगिक संघ अपने समूह की निजी आपुर्ति सेवा गठित कर सकते हैं अथवा किसी निजी कम्पनी से समझौता कर सकते हैं	सामुदायिक सहकारिताएं पानी समिति, पानी पंचायत जैसी ग्रामीण जल प्रयोक्ता समूह का गठन कर सकते हैं।	वार्ड समिति अथवा जल प्रयोक्ता संघ

(सौम्या, 2005)

यूरोपियन कमीशन की एक रिपोर्ट के अनुसार भारत कृषि योग्य भूमि के मामले में संयुक्त राज्य अमेरिका के बाद दूसरा सबसे बड़ा देश है। यह धान, गहूँ और गन्ने का प्रमख उत्पादक है। इस क्षेत्र में थोड़ी बहुत तो बारिश होगी, लेकिन सूखे का व्यापक असर रहेगा। जिससे मध्य भारत और पाकिस्तान के अधिकांश हिस्सों में खेती प्रभावित होगी। मगर असल सवाल यह है कि सूखा कितना गम्भीर होगा। काफी हद तक यह इस बात पर निर्भर करता है कि हिन्द महासागर के पश्चिमी हिस्से में पानी का तापमान कैसा रहता है। जैसी अपेक्षा है, वैसा ही तापमान रहा तो सूखे की गम्भीर समस्या झेलनी पड़ेगी। लेकिन अगर यह तापमान अपेक्षा से अधिक तेजी से बढ़ा तो पूरे देश में बारिश की मात्रा बढ़ेगी और सूखे की आशंका भी टल जायेगी।

प्राकृतिक आपदाओं से मुकाबला करना कोई आसान काम नही है। लेकिन ऐसे हालात प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन और आधुनिक तकनीक के कारण ही पैदा हो रहे हैं, इसलिए हम इस महाविनाश की ओर जा रहे हैं, जिसकी कल्पना पुराणों में कलयुग के अन्त के रूप में पहले से ही घोषित की जा चुकी हैं। (सिंह, 2015)

जल प्रबन्धन में सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली की उपयोगिता

भारतीय कृषि की पिछले 50 वर्षों की विकास यात्रा के दौरान खाद्यान्नों का उत्पादन लगभग चार गुना बढ़ा है। किन्तु वास्तविकता यह है कि अब भी देश एक चौथाई जनता आबादी भूख या कुपोषण अथवा दोनों समस्याओं से ग्रस्त है। इसके अतिरिक्त प्राकृतिक संसाधनों एवं संपदाओं का अनियंत्रित क्षरण एवं दोहन तथा प्रदूषित होता हुआ पर्यावरण भारतीय कृषि के लिए एक बड़ी चुनौती है। निरन्तर बढ़ती जनसंख्या, बटती कृषि योग्य भूमि एवं जलवायु परिवर्तन की स्थिति में दूसरी हरित क्रान्ति केवल जल के कुशल उपयोग व बारानी क्षेत्रों में अधिक उत्पादन द्वारा ही सम्भव हो सकती है।

राष्ट्रीय जल संसाधन विकास योजना के अनुमानों के अनुसार वर्ष 2050 तक उपलब्ध जल संसाधन में सिंचाई का हिस्सा घटकर 79 प्रतिषत रह जायेगा। चूँकि उपलब्ध जल का अधिकांश भाग सिंचाई हेतु प्रयोग किया जाता है। अतः इसके अधिक से अधिक लाभ प्राप्त करने पर बल दिया जाना चाहिए। इस प्रयास में सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली महत्वपूर्ण योगदान दे सकती है। सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली के माध्यम से पौधों के जड़ क्षेत्र में नियंत्रित मात्रा में पानी के उपयोग द्वारा पानी के अपव्यय को कम किया जा सकता है तथा सीमित जल संसाधनों से अधिक से अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है। अब तक भारत में 5.9 लाख हैक्टेयर भूमि पर सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली से सिंचाई की जाती है जबकि इसका विस्तार 270 लाख हैक्टेयर भूमि तक किया जा सकता है। विभिन्न फसलों में सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली के क्षेत्र विस्तार के ऑकड़ें दर्शाते हैं कि लगभग 50 प्रतिशत द्वोत्र में उद्यान फसलें ली जा रही है। देश में क्षेत्रफल की दृष्टि से सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली में सर्वाधिक अग्रणी राज्यों में क्रमशः महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश तथा गुजरात आदि हैं।

सूक्ष्म सिंचाई प्रणालीः– सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली एक आधुनिक पद्धति है जिसमें पानी के मुख्य स्रोत से पौधों की जड़ों तक कुछ विभिन्न प्रकार, आकार एवं क्षमता वाले प्लास्टिक के पाइपों की सहायता से पूरे खेत/बाग में जाली बिछा कर तथ कुछ अन्य उपकरण जैसे ड्रिपर/इमिटर, स्क्रिन, रेत छन्नक मुख्य पाइप, निकास, वाल्व, वेन्चुरी आदि को लगाकर पानी उपलब्ध कराया जाता है।

सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली में पाइप के नेटवर्क पर लगे हुए उत्सर्जन द्वारा सिंचाई वाले पौधों के जड़ क्षेत्र में सिंचाई के लिए जो प्रौद्योगिकी शामिल है, उनमें ड्रिप, सूक्ष्म छिड़काव, लघु छिड़काव, माइक्रोजैट्स, सिस्टम फैन जैंट्स, माइक्रो छिड़काव, कोगर्स पाइप इत्यादि मुख्य हैं। इनसे निर्धारित दर के अनुसार पान का उत्सर्जन किया जाता है विभिन्न उत्सर्जकों का इस्तेमाल विशिष्ट जरूरत पर निर्भर करता है जो फसलानुसार अलग–अलग हो सकते हैं। पानी की आवश्यकता, पादप अंतराल, आयु, मृदा प्रकार, जल की गुणवत्ता तथा उपलब्धता आदि कुछ कारक हैं जो उत्सर्जन प्रणाली के चयन को निर्धारित करते हैं। कभी–कभी माइक्रोट्यूब्स का इस्तेमाल भी उत्सर्जक के रूप में किया जाता है यद्यपि यह एक अकुशल तरीका है। सभी प्रकार की सतही तथा उप सतही सिंचाई प्रणाली सूक्ष्म सिंचाई प्रौद्योगिकी के अंतर्गत आती है।

सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली क्यों ?

कृषि की सफलता एवं असफलता पानी एवं उर्वरक के समुचित प्रबन्धन पर निर्भर करती है। इनका असंतुलित प्रयोग विभिन्न प्रकार की पर्यावरणीय समस्याओं को जन्म देता है, जैसे अत्याधिक दोहन के कारण भूजल स्तर का नीचे गिरना अथवा नहर के पानी के अत्याधिक उपयोग के कारण विभिन्न क्षेत्रों में जल प्लावन एवं लवणता की समस्या इत्यादि। भारत के हर राज्य में जल एवं उर्वरक जनित समस्या तेजी से पनप रही है। इसके अतिरिक्त उर्वरकों का एक बड़ा हिस्सा आयात किया जाता है। जिससे दश का विदेशी मुद्रा भण्डार प्रभावित होता है। सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली के माध्यम से उर्वरक अनुप्रयोग द्वारा उर्वरक लागत काफी हद तक कम की जा सकती है। वर्तमान समय में विश्व बाजार का स्वरूप काफी तेजी से बदला है जिसमें गैर पारत्परिक फसलों जैसे पुष्प, फल एवं सब्जियों की खपत बढ़ी है। इन फसलों को अंतर्राष्ट्रीय मानकों के आधार पर उत्पादित करने के लिए सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली वांछनीय है।

सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली अर्थात सूक्ष्म फव्वारा के प्रयोग द्वारा पानी एवं घुलनशील उर्वरक पौधों की जड़ों या आस–पास पहुँचाया जाता है ताकि पानी का रिसाव तथा वाष्पीकरण न्यूनतम हो और पानी की बचत हो सके। इससे परम्परागत सिंचाई विधियों की तुलना में 50 से 70 प्रतिशत तक पानी की बचत की जा सकती है। सिंचाई की यह विधि विभिन्न प्रकार की मिट्टी, ऊँची–नीची जमीन, पहाड़ी क्षेत्रों इत्यादि में आसानी से प्रयोग की जा सकती है। सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली कपास, गन्ना, फल, सब्जियों एवं फलों के लिए उपयुक्त पाई गई है। अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली द्वारा परम्परागत सिंचाई विधियों की तुलना में 30–40 प्रतिशत अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। उत्पादन वृद्धि तथा पानी बचत के अतिरिक्त सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली को अपनाकर 60–70 प्रतिशत तक श्रम की बचत भी की जा सकती है। इस विधि से लवणीय जल को सिंचाई हेतु प्रयोग करना भी सम्भव है।

सिचाई के साथ उर्वरक प्रयोग (फर्टिगेशन):– सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली से सिंचाई जल के साथ–साथ घुलनशील उर्वरकों एवं आवश्यक पोषक तत्वों का एक साथ प्रयोग किया जा सकता है इस प्रक्रिया में फर्टिगेशन द्वारा उर्वरक की खपत 25–40 प्रतिशत कम हो सकती है। इस प्रक्रिया में घुलनशील उर्वरकों को सिंचाई जल में मिश्रित कर दिया जाता है। फर्टिगेशन फसल एवं मृदा की आवश्यकताओं के अनुरूप उर्वरकों एवं जल का सर्वोत्तम संतुलन बनाये रखने के लिए एक कुशल

तकनीक है। जल एवं पोषक तत्वों का सही समन्वय अधिक पैदावार एवं गुणवत्ता की कुंजी है। फर्टिगेशन में उर्वरकों को कई बार में पूर्वनियोजित सिंचाई के साथ फसलों में देते हैं। सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली द्वारा जल एवं उर्वरक उपयोग दक्षता अधिक होने के कारण 40–60 प्रतिशत कम पानी और 20–40 प्रतिशत कम उर्वरक प्रयोग करके भी अच्छी पैदावार प्राप्त की जा सकती है। जल एवं उर्वरक की बचत के साथ–साथ उत्पादकता एवं गुणवत्ता में भी वृद्वि की जा सकती है।

ड्रिप सिंचाई पद्वति के लाभः– इस पद्धति द्वारा पानी पौधों के जड़ क्षेत्र में ही दिया जाता है जिसके कारण पानी की बचत होती है और कम पानी से अधिक क्षेत्र में कृषि उत्पादन सम्भव होता है।

- एक समान जल वितरण होता है तथा उत्पादन ज्यादा होता है।
- पानी देने के लिए नालियॉ बनाने की आवश्यकता नही होती है जिससे श्रम की बचत होती है।
- पोषक तत्वों, पानी एवं हवा का पौधों की जड़ों में समुचित सम्मिश्रण सम्भव होने से पैदावार तथा पैदावार की गुणवत्ता में वृद्धि होती है।
- केवल जड़ों में पानी देने से खरपतवार कम होने से खरपतवार नियन्त्रण में कम व्यय होता है।
- ड्रिप प्रणाली द्वारा पौधों की जड़ों में ही खाद का एक समान वितरण होने से उर्वरकों की बचत होती है।
- इस पद्वति से उबड़–खाबड़ खेत में भी सिंचाई भली प्रकार की जा सकती है।

ड्रिप सिंचाई के प्रकार

- **सतही ड्रिप सिंचाईः–** इसमें लैटरल पाइपों को जमीन पर बिछाते हैं और ड्रिपरों के लैटरल पाइपों में छेद करके ड्रिपर को लगा देते हैं। ड्रिपरों से जल बूँद–बूँद करके पौधों की जड़ों के आस–पास गिरता है। ड्रिपरों में जल प्रवाह 2–20 लीटर प्रति घंटा होता है। आवश्यकतानुसार ड्रिपरों की जगह अति सूक्ष्म नलिकाओं का भी प्रयोग जल उत्सर्जन के लिए किया जा सकता है।
- **उप–सतही या भूमिगत ड्रिप सिंचाईः–** इसमें लेटरल पाइपों को जमीन के नीचे जड़ों के साथ–साथ बिछाते हैं जो फसल को आवश्यकतानुसार पानी उपलब्ध कराते हैं। उप सतही ड्रिप सिंचाई में केवल उपसतह नम होती है तथा तथा मृदा की ऊपरी सतह सूखी रहती है। उपसतही सिंचाई में वाष्पोत्सर्जन से होने वाली जल हानि बहुत कम होती है। मृदा की ऊपरी सतह सूखी रहने के कारण खरपतवारों की वृद्वि भी नही होती है। लैटरल पाइपों में लगे ड्रिपर्स द्वारा जल निकलता है। लैटरल पाइपों का निर्माण करते समय ही उनके अन्दर ड्रिपर भी लगाये जा सकते हैं।
- **बुलबुला ड्रिप सिंचाईः–** ड्रिप सिंचाई की इस विधि में जल दबाव द्वारा सूक्ष्म जलधारा की तरह निकलता है जिसके फलस्वरूप बुलबुले उत्पन्न होते हैं और जल का उत्सर्जन ड्रिपर के प्रवाह की तुलना में कई गुना अधिक होता है। बुलबुला ड्रिप सिचाई विधि में उपमुख्य और लेटरल पाइपों के स्थान पर केवल मुख्य पाइप होता है। बुलबुला विधि सिंचाई अभी तक भारत में प्रचलित नही है।
- **ड्रिप/सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली की कार्यविधिः–** ड्रिप सिंचाई यूँ तो आधुनिक प्रणाली है परन्तु हमारे देश में यह सिंचाई की एक परम्परागत विधि भी रही है। देशी तौर–तरीके के विपरीत आधुनिक ड्रिप सिंचाई प्रणाली पूरी तरह तकनीकी उपकरणों पर निर्भर रहती है जैसे प्लास्टिक के पाइपों का जाल, बूँद–बूँद पानी टपकाने के लिए ड्रिपर या इमीटर, पानी को छान कर साफ करने के लिए अलग–अलग तरह के फिल्टर प्रेसर गेज और कई प्रकार के वाल्व। ड्रिप/माइक्रो पद्धति में मुख्य पाइप को सिंचित स्रोत से जोड़ दिया जाता है। यह पानी मुख्य पाइप के द्वारा सबमेन पाइप में जाता है जहॉ यह स्क्रीन/सैन्ड फिल्टर से होकर गुजरता है। फिल्टर से गुजरने के उपरांत पानी हर तरह की अशुद्धियों से मुक्त हो जाता है। इसके बाद यह पानी लेटरल पाइप में आता है और अन्त में ड्रिप/माइक्रोस्प्रिकलर में से होकर पौधों की जड़ों में गिरने लगता है।

प्रबन्धन एवं देखभालः– लम्बे समय तक बिना किसी बाधा के कार्य लेने के लिए सूक्ष्म सिंचाई संयंत्र की नियमित देखभाल अतिआवश्यक है। संयंत्र के रख–रखाव के लिए निम्नलिखित बातों पर ध्यान रखना लाभकारी सिद्ध होता है–

1. फिल्टर्स की रबड़, वाल्व और विभिन्न फिटिंग्स की जांच नियमित रूप से करते रहना चाहिए यदि उनमें किसी भी प्रकार का रिसाव हो तो उसको तुरन्त ठीक करें।

2. सबमेन पाइप में दबाव एक किलोग्राम प्रति वर्ग सेन्टीमीटर होना चाहिए।
3. सभी ड्रिपर्स के लिए समान बहाव (बहाव) दर को सुनिश्चित करना चाहिए। यदि ड्रिपर किसी गन्दगी के कारण अवरूद्ध हैं तो अन्य ड्रिपर के बहाव के प्रभावित होने की संभावना होती है। अतः बचाव के लिए सभी ड्रिपर को खोलकर साफ करना चाहिए।
4. ड्रिपर्स द्वारा नम किए गए क्षेत्रफल का निरन्तर निरीक्षण करते रहना चाहिए और असमानता होने पर तुरन्त आवश्यक कार्यवाही करनी चाहिए।
5. यदि ड्रिपर कुछ दिनों के लिए बन्द रहे तो संभव है मकड़ी या अन्य कीट उसमें जाले आदि बना लें जिससे जल का प्रवाह कम हो जाता है। इसलिए नियमित रूप से ड्रिपर को खोलकर साफ करते रहना चाहिए।
6. यदि कुछ ड्रिपर से जल फुहार आ रही हो तो इसका कारण चकती या दाब अतिपूरक ड्रिपर से रबर या डायफ्राम गिर जाना हो सकता है जिसे तुरन्त लगाना चाहिए।
7. लेटरल पाइपों को खेत से हटाते समय बड़े गोले के आकार में मोड़ना चाहिए।
8. लेटरल पाइपों को हानि से बचाने के लिए खेत में कार्य करने वाले मजदूरों को ड्रिप यूनिट के सावधानी से रख–रखाव के बारे में पूरी जानकारी देनी चाहिए।
9. बरसात के मौसम में खेत में बिछे लेटरल पाइप को हटा देना चाहिए। हटाते समय उसे सही तरीके से फोल्ड करना चाहिए ताकि पाईप मुड़ न जाए।

नियमन केवल आर्थिक कानूनों तक ही सीमित नही रहना चाहिए। पानी एक सीमित संसाधन है और समाज की केवल एक ही पीढ़ी की जागीर नही है। उदाहरणार्थ हमें अभी यह मालूम नही है कि अनुचित दोहन का दीर्घकालीन प्रभाव क्या होगा। पानी और पानी के संसाधनों को नियमबद्व करने के लिए भौतिक और वित्तीय, दोनों ही ढॉचों का उपयोग किया जाना चाहिए। यथा, किसी भी निश्चित क्षेत्र में, भूजल के मौटे तौर पर परिभाषित दीर्घकालीन मास्टर प्लान से ही पानी के दोहन और उपयोग की योजना तैयार करनी चाहिए।

अन्त में हमें यह बात मान लेनी चाहिए कि सीमित प्राकृतिक संसाधनों के भली–भॉति प्रबन्धन में ही बुद्धिमानी है। इसके लिए जरूरी है कि हम इस बुद्धिमानी को काम में लाएं और कुछ बुनियादी सिद्धांतों को समझकर उन पर तजी से अमल करें। हमें अपनी संस्थागत व्यवस्थाओं पर फिर से काम करने की आवश्यकता है ताकि उनकी जवाबदेही और कार्यकुशलता में इजाफा हो। हमें सेवा को आगे लाना और जागीर बनाने (सम्पत्ति निर्माण) के काम को पीछे छोड़ना होगा।

सन्दर्भ

1. जेठू बजरंग लाल (2004), वृक्षारोपण से वर्षा आगमन, योजना, जून।
2. सिंह निंकार (2015) मानसून का बदलता मिजाज, डेलीन्यूज एक्टिविस्ट, जून।
3. शाह जे पार्थ एवं सौम्या एच बी (2005) जल संकट, योजना जून।
4. गुप्ता राजेश (2003) सम्पूर्ण जल प्रबन्धन, पंचायत पविार, जून।
5. पण्डुरंगी अमृत (2007) जल क्या वास्तव में सामाजिक वस्तु है, योजना, सितम्बर।
6. अशोक राज एन (1) माइक्रोइरीगेशन नीड ऑफ द 21 सेंचुरी फार कंजर्विंग इण्डियाज वॉटर रिसोर्सेज इन माइक्रो इरीगेशन सर.वी.आई.पी. पब्लिकेशन नम्बर–282 पीपी. 52–62।
7. तोमर ए.एस., चौहान एच.एस. और सिंह के.के (2001) इफेक्ट ऑफ डिफ्रेन्ट इरीगेषन मैथड्स ऑन वेजिटेटिव ग्रोथ, वॉटर सेविंग एण्ड वॉटर यूज एफीसिएंसी ऑफ फ्रेंच बीन, जनरल ऑफ इण्डियन वॉटर रिसोर्सेज सोसाइटी, खण्ड 21 अंक 3 पीपी 146–148।
8. यादव वी.आर और राजपूत टीबीएस (2000) जल की प्रतिकूल परिस्थितियों में ड्रिप सिंचाई की उपयोगिता, भारतीय कृषि के अनुसंधान क्रांतियों सी.एस.आर.आई. करनाल पीपी 281।